Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233
Continuous issue-23 | April – May 2016

कबीर, कबीर सम्प्रदाय और कुछ सामाजिक सन्दर्भ

आजकल अपने देश में असहिष्णुता की बातें उठने लगी हैं। सामान्य जनता नहीं कवि, कलाकार और यहाँ तक की राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी भी अपने सम्बोधनों में इस ओर इशारा करते रहे हैं। राजनीतिक अभिमान हो या कोई चाल, इस सन्दर्भ में चुप्पी खलती है। संवाद हीनता आदमी नहीं आदमी को पत्थर दिल बनाती है।

स्वतंत्रता के पश्चात् हम जिस धर्मनिरपेक्षता की आवश्यकता की अनुभूति कर रहे हैं और उस अनुभूति को साकार करने के लिए अनेक व्यवस्थायें प्रदान कर रहे हैं हमारे संत आवश्यकताओं और व्यवस्थाओं को शताब्दियों पूर्व बड़ी ओजमयी और प्रभावशाली वाणी में प्रतिपादित कर गये हैं।

उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात वैष्णव आचार्यों की प्रेरणा से हुआ। यह भक्ति आन्दोलन केवल सिध्दान्तों की मंजूषा में ही बन्द रह जाता यदि इसे जनकवियों की वाणी प्राप्त न होती। इन कवियों ने तत्कालीन जनभाषाओं में भक्ति की किरणों का आलोक विकीर्ण कर जन-जन के मानस को पवित्र कर दिया। ऐसे कवियों में पहला नाम कबीर का ही है।

कबीर में कई तरह के रंग है, भाषा के भी और संवेदना के भी। हिन्दी की बहुमुखी प्रकृति उनमें खूब खुली है। कुछ मनःस्थितों के चित्र देखें -

कबीरा खड़ा बजार में लिये लुकाठी हाथ।
जो घर फूँके अपना सो चले हमारे साथ।।

x x x x x x x

जें तू बाभन बभनी जाया। तौ आन बाट होइ काहे न आया।।

x x x x x x x

हरि मोरा पिउ मैं हरि की बहुरिया।

x x x x x x x

ऐसे लोगनि सौं का कहिए।
जे नर भय भगति तैं बाहज तिन तैं सदा डरानै रहिए।

x x x x x x x

कबीर कूता रांम का, मुतिया मेरा नाउं।
गले रांम की जेवरी, जित खैंचे तित जाउं।।

x x x x x x x

हमन हैं इश्क मस्ताना हमन को होशियारी क्या ?
रहैं आजाद या जग में हमन दुनिया से यारी क्या ?

(हिन्दी साहित्य और संवेदना का इतिहास - रामस्वरूप चर्तुवेदी पृ. 39)

भारतीय धर्म-साधना के इतिहास में कबीरदास ऐसे महान विचारक एवं प्रतिभाशाली महाकवि हैं जिन्होने शताब्दियों की सीमा का उल्लंघन कर दीर्घकाल तक भारतीय जनता का पथ आलोकित किया और सच्चे अर्थों में जन जीवन का नायक्तव किया।

कबीर ने ही पहले पहल हममें कहने-सुनने की आदत डाली। निर्भिकता से डंके की चोट पर कहना ही कबीर को प्रासंगिक बनाता है। "कहत कबीर सुनो भाई साधो" यह पंक्ति जन-जन के कण्ठ का हार बनी हुई है। यहाँ सुनने वाले को सज्जन कहा गया है उससे साधने की अपेक्षा की गई है।

भक्त कबीर लौहपुरूष थे। सामाजिक उत्थान के लिए उन्होंने भक्तजनों को "प्रेम का ढाई आखर" याद दिलाया तो साधारण जनता के लिए नैतिक उपदेश दिया। बाह्याचार और भेदभाव बढ़ाने वालों के प्रति व्यंग्यबाण चलाया तो अपने को महापण्डित मानने वालों के समक्ष उलटवाँसियां कहकर उनके पाण्डित्य को चुनौती दिया। कबीर मानवतावादी अभिगम का प्रचार-प्रसार करना चाहते थे। वे सभी को समझाते थे कि परमात्मा तो एक ही है। वह सहजता में निवास करता है। आत्मसजगता ही कबीर का परम संदेश है। आगे चलकर इसे संतमत की संज्ञा प्राप्त हुई।

कबीर समझते थे कि प्रेम और आत्मोत्थान से जगत को बेहतर किया जा सकता है। कबीर का यही संदेश उनके शिष्यों ने जगत में फैलाया। आज केवल भारत में ही नहीं समूचे विश्व में कबीरदास वंदनीय हैं। कबीर सम्प्रदाय उनके उपदेशों को जन-जन तक पँहुचना में लगा हुआ है। कबीर सम्प्रदाय के मतानुसार कबीर अवतारी पुरूष हैं -

जुगन-जुगन लीन्हा अवतारा, रहौं निरंतर प्रकट प्रसारा।
सतयुग सत सुकृत कह टेरा, त्रेता नाम मुनेन्दहि मेरा।।
दोपर में करूनाम कहाये, कलियुग नाम कबीर रखाये।।
चारों युग के चारों नाँऊ, माया रहित रहे तिहि ठाँऊ।
सो जाधा पँहुचे नंहि कोई, सूर नर नाग रहे मुख गोई।।

(ग्रंथभवतारण - धर्मदास - पृ. 31-32)

कबीरदास की मृत्यु के पश्चात् अनेक शाखाएं निकल पड़ी। कई स्वतंत्र व्यक्तियों ने समय, स्थान और वातावरण तथा आवश्यकतानुसार अपने नाम से संतमतों का उल्लेख मिलता है। जैसे - उदासीपंथ, दादुपंथ, वैष्णवीपंथ, सतनामी पंथ, गरीबदासी पंथ, चरणदासी पंथ, दरिया पंथ, राधास्वामी पंथ, नामदेवी पंथ, पीपा पंथ, रैदासी पंथ, धन्ना पंथ, सेना पंथ, कमाल पंथ, कमाली पंथ, बुल्ला पंथ, सुरत पंथ, टकसारी पंथ, रामकबीर पंथ, जीवा पंथ इत्यादि।

इन सभी पंथो का उद्भव मूल आदि संतपथ से ही हुआ है किन्तु अब इनमें अपने-अपने साम्प्रदायिक मंतव्य, साधनाएं तथा सिध्दान्त हैं। कुछ तो मूल सिध्दान्त से एकदम उलट गये हैं।

कबीरदास सत्संगी व्यक्ति थे और सत्संग के लिए वे समूचे भारत में भ्रमण किये थे। उनके भ्रमण के ऐतिहासिक प्रमाण भी मिलते हैं। गुजरात में कबीर साहब सं.1564 में आये थे। ऐसा दस्तावेज मिलता है। कबीरवड के आगे लिखा संवत् भी इससे मिलता है। गुजरात के अनेक संतो, संप्रदायों पर कबीर का प्रभाव पड़ा है। गुजरात में संत ज्ञानीजी, पद्मनाभ, कमाल, तत्वाजीवा, निर्वाण तथा संत रैदास उनके समकालीन थे।

गुजरात में कबीर सम्प्रदाय की स्थापना दूसरे प्रान्तों की तरह कबीर की मृत्यु के बाद ही हुई होगी। इससे पहले छत्तीसगढ़ में धमदासी और बनारस में सुरतगोपाली शाखाएँ काम कर रही थीं।

गुजरात में कबीर सम्प्रदाय की स्थापना का श्रेय धमदासी साधुओं को ही है। ये साधु मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ से निकलकर खानदेश पार करते हुए गुजरात में प्रवेश किये और सूरत में सबसे पहले कबीर सम्प्रदाय की स्थापना की। आज सूरत के अतिरिक्त भरूच, बड़ौदा, खंभात, अहमदाबाद, नाडियाद, मोरबी, भावनगर, जामनगर, राजकोट और जूनागढ़ में इनकी शाखाएँ हैं। बनारस के सुरतगोपाली शाखा के मंदिर तो मात्र बड़ौदा, सूरत और अहमदाबाद में है।

कबीर सम्प्रदाय (रा.रा. किशनसिंह गो.चावडा), कबीर परंपरा (कांतिकुमार भट्ट) तथा गुजरात का हिन्दी संत साहित्य (डॉ.रामकुमार गुप्त) में कबीर सम्प्रदाय का विस्तृत उल्लेख मिलता है। गुजरात में कबीर सम्प्रदाय की दो प्रमुख शाखाएँ विद्यमान हैं -

1. रामकबीरिया पंथ
2. सत कबीरिया पंथ

कबीर सम्प्रदाय में सम्प्रदाय के गद्दी और मंदिर तथा महंत आदि की व्यवस्था विधिसम्मत नियमपूर्वक की जाती है। सूरतगोपली शाखा के महंतो का चयन भक्त और वृद्ध साधुओं की समिति व्दारा होता है क्योंकि यहाँ शिष्य परम्परा चलती है। परन्तु धर्मदासी शाखा में चयन की कठिनाई नहीं है यहां पुत्र परम्परा का नियम है। लेकिन अब यहां भी समस्या शुरू हो गयी है। अंतिम महंत श्रीदयानाम साहब निःसंतान चल बसे। गद्दी को सूनी नहीं रख सकते थे, इसलिए वंश परम्परा का अन्त हुआ और यहां भी शिष्य परम्परा शुरू हो गई जिसे ये

लोग वचनवंश के बदले नादवंश कहते हैं। परिणामस्वरूप धरमदासी गद्दी के नये महंत के रूप में ग्रंथमणि साहब का चयन हुआ।

कबीर सम्प्रदाय में दो तरह के अनुयायी हैं -

1. निम्नवर्गीय हिन्दू जिसे एक ऐसी विचारधारा की तलाश है जो उनकी ज्यादा सकारात्मक स्थिति और आत्म छवि को प्रस्तुत कर सकें।

2. आदिवासी लोग जो कि सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से जाति व्यवस्था के निम्नतम स्तर पर रहें हैं। इन्हें निम्न जातियों में शामिलकर हिन्दू परम्परा में मिला लिया गया है। ये अपनी निराशाजनक विषमताओं के विरूद्ध अपने आत्मसम्मान को सुरक्षित रखने की कोशिश कर रहें हैं।

कबीर सम्प्रदाय में दीक्षा में घास का एक तिनका देकर "बीजक" का मूल गुरू मंत्र दिया जाता है और कंठी बांधी जाती है। दीक्षा में तिनके का संकेत सादा जीवन और विनम्रता से है जो साधुओं के स्वभाव और जीवन का मुख्य लक्षण होना चाहिए। संकल्प में ये महंत आजीवन ब्रह्मचर्य, सत्य, अस्तेय, अहिंसा, आतिथ्य, सत्कार और आचार्य पूजा के मंत्र देते हैं।

कबीरपंथी भगत मूर्ति पूजा और देवत्व के अन्य प्रतीकों की पूजा से परहेज करते हैं, मदिरापान और देवताओं को मदिरा का तर्पण नहीं करते। ये लोग शाकाहार अपनाते हैं, पशुबलि छोड़ देते हैं। भूत-प्रेतों की पूजा को अस्वीकार करते हैं सिर्फ एक ईश्वर की पूजा करते हैं। निजी-नैतिकता का पालन बहुत ही कड़ाई से करते हैं जिसमें सच्चाई, ईमानदारी, जीवों के प्रति दया तथा धार्मिक औऱ सामाजिक सहिष्णुता शामिल है। ये लोग गुरू को एक आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकार करते हैं तथा उनकी सेवा करते हैं। तुलसी की माला और सफेद वस्त्र धारण करते हैं।

कबीर सम्प्रदाय के अनुनायी गैर कबीरपंथी से भी विवाह करते हैं लेकिन सम्प्रदाय में वैवाहिक सम्बन्ध को प्राथमिकता दी जाती है। स्त्री भी दीक्षा ले सकती है। कबीरपंथ में पूजा की मनाही है लेकिन धर्मदासी शाखा के मठों में कबीर की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ पायी जाती हैं। सामान्यतः सम्प्रदाय की पवित्र पुस्तक "बीजक" की ही पूजी होती है। कबीर जयंती और मगहर संवत्सरी इनके मुख्य उत्सव हैं। कबीर सम्प्रदाय के लोग वाराणसी और मगहर को तीर्थयात्रा मानकर यहां की यात्रा करते हैं। मठ के साधुओं के रोज के धार्मिक कृत्यों में प्रातः औऱ संध्या के अनुष्ठानिक कृत्य भी शामिल हैं। इनमें आरती, घंटा बजाना, गुरू पूजा आदि प्रमुख हैं। लेकिन इन सबसे महत्वपूर्ण बात रात में कई घण्टों तक चलनेवाला कबीर "बीजक" का समूहवाचन है।

कबीर सम्प्रदाय में भोजन पकाने और खाने के सम्बन्ध में साधुओं और सामान्य अनुनायियों के बीच कोई भेद नहीं है। यहाँ सभी पंगत में बैठकर भोजन करते हैं। इस प्रकार कबीर सम्प्रदाय मनुष्य को एक धरातल खड़ा करता हैं।

हमें याद रखना चाहिए कि जब हमारे सारे सामाजिक राजनैतिक, आर्थिक निर्णय का आधार धर्मशास्त्र था तब हमारे देश की जनता का बहुत बड़ा हिस्सा किसी भी प्रकार के धार्मिक अधिकारों से वंचित था। वेद, शास्त्र और पुराण आदि धार्मिक ग्रंथों का पठन-पाठन उसके लिए वजर्य था। यही नहीं सब प्रकार के धार्मिक कृत्य उसके लिए निषेध थे। ऐसी स्थिति में कबीर ने उस उत्पीड़ित दलित जनता के लिए निर्गुण उपासना का सहज मार्ग बतलाया और आत्मगौरव के भाव का निर्माण किया।

गुजरात के दाहोद जिले के सन्दर्भ में विचार करें तो यह आदिवासी बहुल जिला है। अशिक्षा, कुप्रथा, हिंसा, माँस-मदिरा का सेवन, नशा इत्यादि ऐसे दोष हैं जो आदिवासियों में पारंपरिक रूप से पाये जाते हैं और इनके लिए प्रताड़ना और शोषण का कारण बने हुए हैं। यहाँ का कबीर सम्प्रदाय "सत्यनाम" के आधार पर इन चुनौतियों का सामना करते हुए जीवन का सरल मार्ग सुझा रहा है और आदिवासी प्रजा में जनजागृति फैला रहा है।

इस सन्दर्भ में कह सकते हैं -

1. यहाँ सबसे पहले मयादासजी ने कबीर सम्प्रदाय की नींव डाली।
2. यहाँ सांकड़ीशेरी अहमदाबाद की शाखा का प्रचार-प्रसार अधिक है।
3. यहाँ का "कोणी समाज" सम्पूर्णतः कबीर सम्प्रदाय को मानता है।
4. यहाँ के सम्प्रदाय ने इनके भोजन और भजन को सात्विक बनाया है।
5. इनके भेष और भाव में भी परिवर्तन लक्षित होता है।
6. सात्विक रहन-सहन के कारण कोणी समाज ने इस विस्तार में काफी उन्नति की है।
7. इनकी बाल-विवाह, अनमेल-विवाह जैसा रूढ़ियाँ टूट रही हैं।

इसके अतिरिक्त कबीर सम्प्रदाय के समक्ष अनेक चुनौतियाँ भी हैं जैसे -

1. अन्य सम्प्रदायों का फैलाव होना।
2. कबीर सम्प्रदाय में पुनः रूढ़िवादिता को प्रश्रय देना।
3. नारी के प्रति कम संवेदनशील होना और न कोई आर्थिक पहल करना।
4. अशिक्षित साधु-सन्तों की भीड़ लगना।
5. चढ़ावा, पूजा आदि को अधिक महत्व देना।

भारतीय संस्कृति का प्राणतत्व है - धर्म। भारतीय जीवन अपने प्रारम्भ से ही धर्म से पूरित है। जन्म से पूर्व और मृत्यु के बाद भी पारलौकिक जगत धर्मप्रधान रहा है। शायद हम भारतवासी धर्म से रहित अपना अस्तित्व ही नहीं स्वीकार पाते हैं। लेकिन आज मनुष्य को धर्म नहीं धार्मिकता चाहिए। धर्म अपने बाहरी चिह्नों, मंदिर, मस्जिद, गिरजा के खातिर लड़ता रहा है। धर्म का बाहरीपन धर्मान्धता उत्पन्न करता है, जबकि आध्यात्मिकता मनुष्य ही नहीं जीव मात्र और प्राकृतिक परिवेश के प्रति हमें संवेद्य बनाती है।

आज वर्तमान युग में धर्म के नाम पर इतनी लूट-खसोट मची हुई है कि सामान्य मनुष्य किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया है। साधारण आदमी अपने को ठगा हुआ महसूस कर रहा है। हरियाणा के रामपाल बाबा की कहानी हो या अहमदाबाद के आसाराम बापू की, सबने मनुष्य को धर्मान्ध बनाया है। ऐसे में कबीर की याद आये बिना कैसे रह सकती है -

नाहीं धर्मी नाहीं अधर्मी, ना मैं जती न कामी हो।
ना मैं कहता ना मैं सुनता, ना मैं सेवक-स्वामी हो।
ना मैं बंधा ना मैं मुक्ता, ना मैं बिरत न रंगी हो।
ना काहूं से न्यारा हुआ, ना काहू के संगी हो।
ना हम नरक-लोक को जाते, ना हम स्वर्ग सिधारे हो।
सब ही कर्म हमारा कीया, हम कर्मन ते न्यारे हो।
या मत को कोई बिरलै-बूझै, सो अटर हो बैठे हो।
मत कबीर काहू का आपै, मत काहू को मेटे हो।

(कबीर - हजारी प्रसाद व्दिवेदी - पृ.233)

आज जब अपने निहित स्वार्थों के कारण एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का शोषण कर रहा है तब कबीर की मशाल पकड़े बिना मार्ग नहीं ढूंढा जा सकता । आज जब विश्व कई खेमों में बटता जा रहा है और आतंकवाद, नस्लवाद, नक्लसवाद, माओवाद, आईसिस के कारण बे-रोकटोक हिंसा बढ़ती जा रही है, तब ऐसे समय में संत कबीर हमार ध्यान आकृष्ट करते हैं। उनकी वाणी परम्परागत बनाई विभाजक हदों को मिटाती है और मानवीय संवेदना के मूल उत्स से जोड़ती है।

दाहोद जिले में फैला कबीर सम्प्रदाय जिले की तस्वीर बदल रहा है। वह इस जिले की सामाजिक चेतना में नई ऊर्जा भर हा है। यह ऊर्जा मनुष्य को शीलवान, निर्भय और सदाचारी बनाती है। यहाँ का समूचा “कोणी समाज” कबीर सम्प्रदाय के “सत्यनाम” का पक्षधर है। व्यक्ति विकास के साथ ही सामाजिक विकास देखा जा सकता है। लोगों में धर्म के प्रति आस्था और आकर्षण बढ़ा है जिससे इनकी क्रूर और हिंसक छवि धूमिल हो रही है। “सत्यनाम” के साथ ये राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि वे जिस दिशा में जा रहे हैं उस धार्मिक सत्य को पहचान सकें। इसकी जवाबदारी यहाँ के साधु-संतों और महंतों की है। कबीर

की मशाल उनके हाथ में है जो दिशा दिखाती है। यह सम्प्रदाय निराशा, वासना, हिंसा और प्रतिशोध में अहंकार में भटकते हुए को मार्ग दिखा रहा है और उन्हें राष्ट्र की सामान्य धारा से जोड़ रहा है।

अन्त में उदय प्रकाश की ये पंक्तियाँ -

कुछ नहीं सोचने
और कुछ नहीं बोलने पर
आदमी
मर जाता हैं।

(आधुनिक हिन्दी काव्य - सं. - दयाशंकर - पृ. 165)

****

डॉ.ज्ञानसिंह एम.चन्देल
आर्ट्स कॉलेज लीमखेड़ा
लीमखेड़ा, जिला- दाहोद

Copyright © 2012- 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat